www.thearyasamaj.org

...o. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2015-17

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

मूल्य : 2 रु.
वर्ष: 73 अंक : 45
सृष्टि संवत् 1960853117
5 फरवरी, 2017
दयानन्दब्द 193
वार्षिक : 100 रू.
आजीवन : 1000 रू.
दूरभाष : 2292926, 5062726

जालन्धर

वर्ष–73, अंक : 45, 2-5 फरवरी 2017 तदनुसार 23 माघ संवत् 2073 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

हृदय से तेरा भजन

-ले० स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

यस्त्वा हृदा कीरिणा मन्यमानोऽमर्त्यं मर्त्यो जोहवीमि।
जातवेदो यशो अस्मासु धेहि प्रजाभिरग्ने अमृतत्वमश्याम्।

-ऋ० ५।४।१०

शब्दार्थ-य: = जो **मर्त्य:** = मैं मरणधर्मा **त्वा** = तुझ **अमर्त्यम्** = अविनाशी को **मन्यमान:** = मानता हुआ **कीरिणा** = स्तुतिपूर्ण **हृदा** = हृदय से **जोहवीमि** = बार-बार पुकारता हूँ। हे **जातवेद:** = सर्वज्ञ ! हृदय के मर्मज्ञ ! **प्रजाभि:** = प्रजाओं के साथ, अथवा प्रजाओं के द्वारा **अस्मासु** = हममें **यश:** = यश **धेहि** = डाल। हे **अग्ने** = सबको ऊपर उठाने वाले ! हम **अमृतत्वम्** = मोक्ष **अश्याम्** = प्राप्त करें।

व्याख्या-जब कोई ज्ञानी प्रतिदिन प्राणियों को मृत्यु का ग्रास होते देखता है, तो उसे निर्वेद तथा चिन्ता आ घेरते हैं। निरन्तर चिन्तन से उसे बोध होता है कि मैं मर्त्य हूँ, मेरे आत्मा और देह का वियोग अवश्यम्भावी है। उसे दीखता है-**'वियोगान्ता: हि संयोगा:'**-संयोग का अन्त वियोग है, शरीर का परिणाम राख है-**'भस्मान्तं शरीरम्'**-यजु:० ४०।१५। तब उसका देह-विषयक अभिमान नष्ट हो जाता है, इस देह की ममता उसे नहीं पकड़ती। उसे इस शरीर से पृथक् कोई ऐसा तत्त्व दीखता है जो इस मरणधर्मा देह में रहता हुआ भी मृत्यु का ग्रास नहीं होता। उसे वह अमर्त्य समझता है। उसे भासता है कि वास्तविक वह 'यह' है, किन्तु इसका मरणधर्मा के साथ सङ्ग उसे अकुला देता है, बेचैन कर देता है। तेरी शरण में आता है। तेरे गुण से उसका हृदय भर जाता है। भूल जाता है वह संसार को, बार-बार तुझे पुकारता है, दिल से पुकारता है, हृदय से पुकारता है। वह कहता है-

यस्त्वा हृदा कीरिणा मन्यमानोऽमर्त्यं मर्त्यो जोहवीमि।

मैं अपने-आपको मर्त्य और तुझको अमर्त्य मानता हुआ तेरे अनुराग से पूर्ण हृदय से तुझे बार-बार पुकारता हूँ। केवल पुकारता ही नहीं, तुझसे कुछ माँगता हूँ-**जातवेदो यशोअस्मासु धेहि।** सबमें रहने वाले ! हमें यश दो। मुझे ? नहीं, हमें। पुकारता मैं हूँ, किन्तु माँगता सबके लिए हूँ, तूने ही सिखाया है। तूने अपनी वेदवाणी में फ़रमाया है-**'केवलाघो भवति केवलादी'** -ऋ० १०।११७।६। अकेला खाने वाला पाप खाता है। पापी तो यशरहित= या अपयशवाला होता है। मुझे अपयश नहीं चाहिए, अत: हम सबको यश दे। हम सभी यशस्वी हों-**'बाहुभ्यां यशोबलम्'**-भुजाओं से यशोयुक्त बल मिले।

तू तो बड़ा कुपालु है। वेद ने मुझे बतलाया है-

यस्मै त्वं सुकृते जातवेद उ लोकमग्ने कृणव: स्योनम्।
अश्विनं स पुत्रिणं वीरवन्तं गोमन्तं रयिं नशते स्वस्ति।।

-ऋ० ५।४।११

जातवेद ! जिस सुकृति के लिए तू छोटा-सा भी सुखकारी सूराख= छिद्र कर देता है, वह संसार के सभी सुखों, ऐश्वर्यों को आराम से प्राप्त करता है। प्रभो ! जातवेद ! सूराख को थोड़ा-सा चौड़ा कर दे। मुझे घोड़े नहीं चाहिएँ, मुझे पुत्रकलत्र नहीं चाहिएँ। मुझे चाहिए अमृत= मृत्युरहित जीवन। कीर्ति तो नाशवान् है, अनित्य है, अत: हम इस कीर्ति के चक्र में न पड़े रहें। हमारी कामना इससे बड़ी है। हमारी हार्दिक भावना यह है-**अग्ने अमृतत्वमश्याम्**-ज्ञानिन् ! हम मुक्ति प्राप्त करें। धनधान्य पुत्रकलत्र, भूसम्पत्ति सब यहीं रह जाती हैं। बन्धु-बान्धव सब विमुख हो जाते हैं, अत: मैं ज्ञानपूर्वक इनसे छूटना चाहता हूँ। अकेला ? नहीं, नहीं, नहीं !!! मैं ? नहीं ! हम। हम सभी दु:खी हैं, मृत्यु से त्रस्त हैं। अमृत का प्याला पिला और हमें मृत्यु से छुड़ा।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

लुधियाना पहुंचो लुधियाना पहुंचो

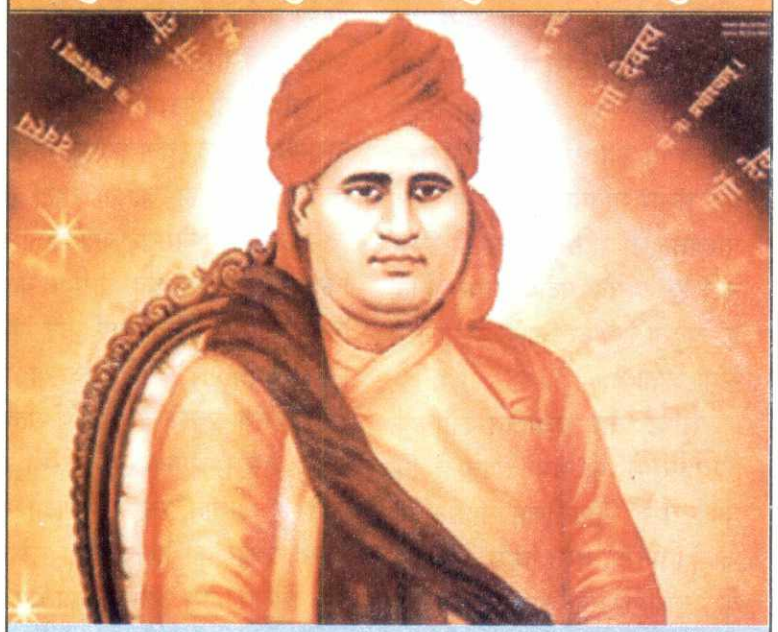

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब (रजि.), गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा जालन्धर के तत्वावधान में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के 193वें जन्म दिवस के उपलक्ष्य में एक भव्य समारोह का आयोजन आर्य महिला कालेज, सिविल लाईन्ज लुधियाना में 19 फरवरी 2017 को प्रात: 9.00 बजे से दोपहर 1.00 बजे तक होगा। इसी उपलक्ष्य में 18 फरवरी 2017 को 10.30 बजे विशाल शोभायात्रा लुधियाना में निकाली जा रही है। इस समारोह में आर्य जगत के प्रसिद्ध सन्यासी स्वामी सम्पूर्णानन्द जी करनाल एवं आचार्य विश्वामित्र जी बिजनौर पधार रहे हैं। आप इस भव्य समारोह में परिवार सहित सादर आमंत्रित हैं।

-: निवेदक:-

श्री सुदर्शन शर्मा — सभा प्रधान

श्री प्रेम भारद्वाज — सभा महामंत्री

www.thearyasamaj.org

महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित सृष्टि विज्ञान

-ले० कुसुम अग्रवाल बी-8, पेपर मिल, कालोनी, यमुनानगर (हरियाणा)

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के अष्टम समुल्लास में कुछ ऐसे प्रश्नों का वेदशास्त्र के आधार पर युक्ति एवं तर्कसंगत समाधान किया है जो चिरकाल से मानव मस्तिष्क को उद्वेलित कर रहे थे जैसे-हम अपने चारों ओर जो सृष्टि देख रहे हैं, वह क्या है ? वह कब बनी? कैसे बनी ? किसने बनाई है ? क्यों बनाई है ? यह सृष्टि कब तक ऐसे ही रहेगी ? हम कौन हैं ? कहां से आए हैं ? मृत्यु क्या है ? आदि। महर्षि दयानन्द एक सुनिश्चित क्रम से इस जगत पहेली की व्याख्या इस प्रकार करते हैं-

सृष्टि क्या है-'सृज्यते वा सा सृष्टि' अर्थात् जिसका सृजन हुआ है या हो रहा है वह 'सृष्टि' है। इस परिभाषा के अन्तर्भूत प्राणियों के शरीर, पहाड़, नदियां, वनस्पति, धातुएं आदि समस्त पदार्थ आ जाते हैं। 'सृष्टि' को 'जगत्' भी कहते हैं। जगत् का अर्थ 'गतिमान' है। यह संसार गतिमान है। इसमें सदैव परिवर्तन हो रहा है, कुछ भी स्थिर नहीं है। प्रत्येक पदार्थ उत्पन्न होता है, बढ़ता है फिर काल के गाल में समा जाता है।

सृष्टि का प्रयोजन-लौकिक व्यवहार में भी हम देखते हैं कि कोई वस्तु निष्प्रयोजन नहीं बनाई जाती। प्रत्येक वस्तु किसी न किसी के उपयोग हेतु बनाई जाती है। फिर सृष्टि का भी कोई उपयोग होना चाहिए। ऋषि दयानन्द संसार में 3 अनादि सत्ताएं मानते हैं। एक ईश्वर, जो इस सृष्टि का कर्त्ता, धारण करता और संहरता है, दूसरी सत्ता असंख्य जीवात्माएं हैं। ईश्वर तथा जीवात्माएं दोनों सत्ताएं चेतन हैं ईश्वर सर्वशक्तिमान है, जीवात्माएं अल्पशक्तिमान हैं। तीसरी सत्ता प्रकृति है जो जड़ है। यह तीनों सत्ताएं प्रत्येक काल में थीं और सदैव रहेंगी। अत: सृष्टि इन्हीं सत्ताओं में से किसी एक सत्ता के उपयोग के लिए होनी चाहिये। इन तीनों में से परमात्मा तो पूर्णकाम है, उसकी कोई आवश्यकताएं हो नहीं सकतीं। प्रकृति जड़ है। जड़ पदार्थ की भी कोई कामना नहीं होती। इससे सिद्ध होता है कि यह सृष्टि जीवात्माओं के प्रयोजन के लिए ही बनाई गई है क्योंकि जीवात्माएं अल्पशक्ति हैं और चेतन हैं। अत: जीवात्माओं के भोग और अपवर्ग (मोक्ष) प्राप्ति हेतु यह सृष्टि परमात्मा ने ही बनाई है, इसमें क्या प्रमाण है? हम देखते हैं कि सृष्टि की रचना ज्ञानपूर्वक, व्यवस्थामूलक है, आकस्मिक नहीं। विश्व के बहुत आकार, ग्रह नक्षत्रों की अगणित संख्या और उन पर शासन करने वाले नियमों के वैविध्य को देखकर कोई भी उसकी सत्ता को स्वीकार किये बिना नहीं रह सकता। अरस्तु ने अपनी पुस्तक Book of Knowledge में लिखा है "Things did not happen by chance, law regained every-where". परमात्मा के अनुशासन से शून्य विश्व के ढांचे में व्यवस्था की कल्पना करना ऐसा ही है जैसा किसी बगीचे के सौन्दर्य को देखकर माली के अस्तित्व को नकारना।

सृष्टि की रचना के पूर्व की अवस्था-सृष्टि रचना के पूर्व केवल एक परमात्मा ही जागता रहता है, जिसके ज्ञान में बराबर बना रहता है कि सृष्टि रचना का प्रारम्भ कब किया जाएगा। जीवात्माएं एक गाढ़ निद्रा (Coma) जैसी अवस्था में होती हैं तथा प्रकृति के परमाणु सत्व, रजस, तमस् अपनी साम्यावस्था में रहते हैं, अर्थात् उन परमाणुओं में किसी प्रकार की हलचल के संकेत नहीं मिलते। इस अवस्था का वर्णन ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में इस प्रकार मिलता है-

न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न रात्र्यै अह्न आसीत् प्रकेतः।
अनादिवातं स्वधया तदेकं
तस्माद्धान्यन्न परः किंचनास।।
10.12.9.2

उस समय मृत्यु नहीं थी, उस समय अमरत्व भी नहीं था। रात्रि और दिन के विभाग का कोई ज्ञान नहीं था। उस समय वह एक आत्म तत्त्व एक प्राण रूप में था।

सृष्टि रचना का प्रारम्भ-प्रलय काल अर्थात् सृष्टि रचना से पूर्व यह सब जगत् प्रकृति के असंख्य परमाणुओं से आच्छादित एक गहन शून्य तथा अन्धकार की स्थिति में था। प्रकृति के यह परमाणु ही वह मूल तत्त्व हैं जिनसे इस समस्त सृष्टि के पदार्थों की रचना होती है। प्रलय काल पूरा होने पर चेतन शक्ति परमात्मा की प्रेरणा से त्रिगुण मूल तत्त्वों में हलचल प्रारम्भ हो जाती है। इस हलचल का प्रथम परिणाम महत् (अहंकार या बुद्धि) है। इस महत् तत्त्व से ग्यारह इन्द्रियां तथा पांच सूक्ष्म भूतों का निर्माण होता है। ग्यारह इन्द्रियों में 5 ज्ञानेन्द्रियां, 5 कर्मेन्द्रियां तथा एक मन है। चक्षु, श्रोत्र (कर्णेन्द्रिय) घ्राण (गंध ग्रहण इन्द्रिय) रसना तथा त्वचा यह पांच ज्ञानेन्द्रियां हैं। हाथ, पांव, वाणी तथा पायु, उपस्थ (मल-मूत्र इन्द्रियां) यह पांच कर्मेन्द्रियां हैं। मन आन्तर इन्द्रिय हे जो दोनों प्रकार की इन्द्रियों से सम्बन्धित है। पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश के अणु सूक्ष्म भूत या तन्मात्र कहलाते हैं। इन्हीं से स्थूल भूतों की उत्पत्ति होती है। भूतों की सूक्ष्म अवस्था को अर्थात् अणु रूप को इन्द्रियों से अनुभव नहीं किया जा सकता, परन्तु यह अणु जब पृथिवी, जल, वायु, अग्नि तथा आकाश आदि स्थूल भूतों को रूप में परिवर्तित हो जाते हैं तब यह इन्द्रियां ग्राह्य हो जाते हैं। स्थूल भूतों की रचना में पहले आकाश (खाली स्थान) बनता है, आकाश के पश्चात् वायु, वायु के पश्चात् अग्नि, अग्नि, के पश्चात् जल और जल के पश्चात् पृथिवी उत्पन्न होती है। आकाश का मुख्य गुण शब्द, वायु का मुख्य गुण स्पर्श, अग्नि का मुख्य गुण तेज, जल का शीतलता और पृथिवी का मुख्य गुण गंध है। पृथिवी से अन्न उत्पन्न होता है। अन्न से औषधियां, औषधियों से सभी प्राणियों के शरीर बनते हैं। शरीरों का निर्माण हो जाने पर ईश्वरीय व्यवस्था से इनमें अपने पूर्व जन्मों के कर्मों के अनुसार जीवात्माएं प्रवेश कर जाती हैं। वैशेषिक दर्शन के अनुसार शरीर, वाणी और मन से जो ज्ञानपूर्वक चेष्टाएं कारण है वह कर्म है। जन्म जन्मान्तरों में किये गए शुभ कर्मों से मनुष्य योनि तथा अशुभ से अशुभतर तथा अशुभतम कर्मों के अनुसार क्रमश: पशु, कीट पतंग तथा वनस्पति आदि की योनियां मिलती हैं। इसमें योग दर्शन का भी प्रमाण है-"सति मूले तद्विपाको-2/13

ईश्वरीय व्यवस्था के अनुसार सृष्टि के आरम्भ में युवा शरीर ही बने थे जिनमें जीवात्माओं ने प्रवेश किया। इसके पश्चात् ज्ञानपूर्वक मैथुनी सृष्टि का प्रारम्भ हो जाता है। प्रत्येक सृष्टि के प्रारम्भ में अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा आदि ऋषि अयोनिज ही उत्पन्न होते हैं। इन ऋषियों के द्वारा ही संसार को वेदों का ज्ञान दिया जाता है। यही ज्ञान शिष्य परम्परा द्वारा पीढ़ी दर पीढ़ी विस्तृत होकर वर्तमान समय तक पहुंचता है। संसार में आज जितना भी ज्ञान-विज्ञान है उसका श्रोत वेद ही हैं।

सृष्टि की स्थिति-सृष्टि की स्थिति के विषय में अन्य मतों में बहुत सी अनर्गल बातें हैं जैसे कि यह पृथिवी बैल के सिर पर टिकी है, कोई कहते हैं। महर्षि दयानन्द इन सभी वेदेतर मतों का खण्डन करके वेद के आधार पर बतलाते हैं कि यह समस्त ब्रह्माण्ड ईश्वर के आधार पर टिका है। जैसे कोई व्यक्ति किसी घड़ी में चाबी भर दे तो वह घड़ी निश्चित समय तक ठीक-ठीक समय बतलाती रहती है, इसी प्रकार ईश्वर ने समस्त ब्रह्माण्ड को गुरुत्वाकर्षण जैसे सत्य नियमों में बांधा हुआ है। इन्हीं सत्य नियमों पर टिकी हुई यह सृष्टि अपना चक्र पूरा करती है। वेद में लिखा है-"स्कम्भो दाधार द्यावा पृथिवी"। (अथर्व 10/2/35) सबके आधार स्तम्भ ईश्वर ने द्युलोक व पृथिवी इन दोनों को धारण किया हुआ है। उसने बड़े अन्तरिक्ष को धारण किया हुआ है। उसने विस्तृत छ: दिशाओं को धारण किया हुआ है। इन सब भुवनों में वह व्यापक है।

सृष्टि की आयु-सृष्टि की आयु चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष है। वर्तमान सृष्टि त्रिविष्टिप (तिब्बत) प्रदेश में हुई थी जो उस समय आर्यावर्त (भारत) का ही भूभाग था। यहीं से आर्य लोग समस्त भूमण्डल में फैल गए। भाषा वैज्ञानिकों ने अपनी खोजों के आधार पर यह सिद्ध कर दिया है कि देव भाषा संस्कृत संसार की सभी भाषाओं की जननी है।

(शेष पृष्ठ 7 पर)

www.thearyasamaj.org

सम्पादकीय.....

बसन्त पंचमी के पर्व का महत्व

बसन्त पंचमी का पर्व हर्ष एवं उल्लास का पर्व है। इस पर्व पर प्रकृति में नया रंग भर जाता है। चारों ओर मनमोहक वातावरण दिखाई देता है। पर्वतीय क्षेत्रों में जब बसन्त ऋतु का पर्व आता है तो प्रकृति का नया रूप देखने को मिलता है। प्रकृति का यह मनमोहक दृश्य सबके मनों को हरने वाला होता है। प्रकृति के अन्दर आए नए दृश्यों को देखकर मनुष्य के अन्दर भी नवचेतना का संचार होता है। जिस प्रकार प्रकृति में परिवर्तन स्थाई नहीं हैं उसी प्रकार मनुष्य जीवन में भी सुख और दु:ख स्थाई नहीं हैं। इसलिए मनुष्य को घोर निराशा से निकलकर आनन्द और उत्साह से जीवन व्यतीत करना चाहिए। संस्कृत भाषा में त्यौहारों को पर्व भी कहते हैं। पर्व का दूसरा अर्थ जोड़ होता है, जैसे हमारे शरीर में हड्डियों का जोड़ होता है। जिनके कारण शरीर सीधा होकर गति करता है। इसी प्रकार गन्ने और बाँस में भी जोड़ होते हैं। पौधों को सीधा खड़ा करने के लिए जोड़ होता है। इसी प्रकार हमारे राष्ट्रीय जीवन में यही महत्त्व पर्वों का होता है। जिस प्रकार शरीर में से हड्डियों को निकाल दें तो शरीर न रहकर केवल मांस का लोथड़ा रह जाता है,इसी प्रकार हमारे जीवन से पर्वों के महत्व को समाप्त कर दिया जाए तो हमारा जीवन नीरस हो जाता है। समय-समय पर आने वाले त्यौहार जहां हमारे जीवन में आनन्द उत्साह पैदा करते हैं, वहां सामाजिक सांस्कृतिक और ऐतिहासिक स्वरूपों का दिग्दर्शन कराके हमें अच्छे मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हैं। हमारे देश में अनेक पर्व आते हैं जिन्हें हम मिलजुल कर आनन्द और उत्साह के साथ मनाते हैं। ऐसे ही प्रेरणा और उत्साह देने वाला बसन्त पंचमी का पर्व भी है। किसी ने ठीक ही कहा है-

है ऋतुराज का आगमन जल-थल में छवि छाई है।
प्रकृति देवी नवले रंग में रंग मञ्च पर आई है।

बसन्त ऋतु के आगमन से जहां दीन दु:खी जन को साहस मिलता है कि हमारा जीवन सकुशल रहेगा, उसके साथ ही प्रकृति में अतुलनीय शोभा का विकास होता है। समस्त भूमि पीली चादर ओढ़े अपनी मन्द सुगन्ध समीर से जन मानस को आह्लादित कर देती है। वनस्पति जगत में सर्वत्र नवीन परिवर्तन होता दिखाई देता है। बसन्त पंचमी के पर्व का समय ऐसा आनन्द और उत्साह देने वाला होता है कि वायुमण्ड़ल मोद और मद से भर जाता है। दिशाएं कलकण्ठा कोकिला आदि विविध विहंगमों के मधुर आलाप से प्रतिध्वनित हो उठती हैं। क्या पशु, क्या पक्षी और क्या मनुष्य सबका हृदय आनन्द से उद्वेलित होने लगता है। मनों में नई-नई उमंगें उठने लगती हैं। भारत के अन्नदाता किसान अपने दिन रात के परिश्रम को आषाढ़ी फसल के रूप में देखकर फूले नहीं समाते हैं। उनके गेहूं और जौ के खेतों की नवाविर्भूत बालों से युक्त लहलहाती हरियाली उनकी आँखों को तरावट तथा चित्त को अपूर्व आनन्द देती है। कृषि के सब कार्य इस समय समाप्त हो जाते हैं।

बसन्त पंचमी का पर्व हमें प्रेरणा देता है कि जिस प्रकार बसन्त के आने पर सम्पूर्ण प्रकृति में हलचल दिखाई देती है और उसमें परिवर्तन होता है, नव संचार होता है, चारों ओर फूल खिलने लगते हैं, उसी प्रकार हमारे मनुष्य जीवन में भी परिवर्तन होना चाहिए। हमारे जीवन में भी आनन्द और उत्साह का संचार होना चाहिए। अपनी कमियों और त्रुटियों को दूर करके उसमें सद्गुणों का संचार करना चाहिए। अगर जड़ प्रकृति ऋतुओं के अनुसार अपने में परिवर्तन कर सकती है तो हम तो चेतन प्राणी हैं। हम चेतन होकर भी अगर अपने अन्दर परिवर्तन नहीं करते, बदलाव नहीं लाते तो हमारा चेतन होने का क्या लाभ?

बसन्त पंचमी का दिन जहां ऋतु परिवर्तन की दृष्टि से अपना महत्व रखता है वहां अपने साथ एक महा बलिदानी, धर्मनिष्ठ भारतीय वीर की याद ताजा कर देता है। इस बलिदानी वीर का नाम हकीकत राय था, जिसने अपनी छोटी सी आयु में जीवन की हकीकत को समझा था, धर्म के साथ निभाया था और अपनी भारतीय परम्पराओं का मुख उज्जवल किया था। वीर हकीकत के जीवन चरित्र को पढ़ने से यह प्रेरणा मिलती है कि हमें अपने पूर्वजों के यशस्वी जीवन की प्राणपन से रक्षा करनी चाहिए। किसी में यह साहस न हो कि हमारे पूर्वजों का अपमान कर सके या हमारे धार्मिक सिद्धान्तों की खिल्ली उड़ा सके। आयु की दृष्टि से वीर हकीकत छोटे थे परन्तु अपने धर्म के प्रति उत्सर्ग का ऊंचा भाव अपने बलिदान द्वारा जो प्रस्तुत किया वह किसी भी स्वाभिमानी व्यक्ति के लिए अत्यन्त प्रेरणा देने वाला है। वीर हकीकत को डराया गया, धमकाया गया, प्रलोभन दिए गए, अपना धर्म छोड़ने के लिए मजबूर करने की कोशिश की गई परन्तु वीर हकीकत उनके भय और प्रलोभन से जरा भी विचलित नहीं हुए। अपना धर्म परिवर्तन करके प्राणों को बचाने की कोई इच्छा प्रकट नहीं की।

धर्म पर बलिदान होने वाले ही धर्म के सच्चे प्रेमी और प्रचारक होते हैं, यह वीर हकीकत ने अपने बलिदान से सिद्ध कर दिया। 14 वर्ष की छोटी आयु होने पर भी जो भाव और श्रद्धा वीर हकीकत के अन्दर थी वह सचमुच प्रेरणादायक है। वीर हकीकत ने गीता के वचनों को सार्थक कर दिया कि। **स्वधर्मे निधनं श्रेय: परधर्मो भयावह:।।** अर्थात् अपने धर्म के लिए मर मिटना भी कल्याणकारी होता है, दूसरों के धर्म को अपनाकर हम सुख और शान्ति को प्राप्त नहीं कर सकते। आज हम थोड़े से भय और प्रलोभन के वशीभूत होकर अपने धर्म को तिलांजलि दे देते हैं। बसन्त पंचमी का पर्व हमें वीर हकीकत के गुणों को अपनाने की प्रेरणा देता है। वीर हकीकत ने अपने बलिदान से हमारा मार्गदर्शन किया है कि चाहे कितने ही कष्ट सहने पड़े, कितनी मुसीबतें सहन करनी पड़े हम अपने मार्ग से, अपने कर्त्तव्य से, अपने धर्म से कभी भी मुंह न मोड़े।

बसन्त पंचमी का पर्व नव उल्लास का पर्व है। यह पर्व हमें भौतिक एवं आध्यात्मिक रूप से प्रेरणा देता है। इस पर्व से प्रेरणा लेकर हम भी अपने अन्दर उत्साह और आनन्द का संचार करें। प्रकृति के साथ-साथ अपने जीवन में भी परिवर्तन करें। पर्वों के द्वारा हमारे अन्दर नई प्रेरणा तथा उत्साह पैदा होता है। पर्वों के बिना हमारा जीवन नीरस हो जाता है। नीरस जीवन को सरस बनाने के लिए हम सभी मिलजुल कर आनन्द और उत्साह के साथ अपने पर्वों को मनाएं। बसन्त पंचमी का पर्व भी ऐसा ही प्रेरणादायक तथा आनन्द और उत्साह को बढ़ाने वाला पर्व है। इसके साथ-साथ बालक हकीकत राय के बारे में बच्चों को बताएं और उनके अन्दर वीरता का भाव पैदा करें। किस प्रकार एक छोटा सा बालक अपने धर्म के लिए अपने आपको कुर्बान कर देता है परन्तु अपना धर्म नहीं बदलता है, यह गुण हमें वीर हकीकत के जीवन से सीखना चाहिए। इस पर्व को मनाते हुए हम जहां प्रकृति के अनुसार अपने जीवन में परिवर्तन करें वहीं वीर हकीकत राय के गुणों को धारण करके अपनी संस्कृति, सभ्यता और धर्म की रक्षा करें।

-प्रेम भारद्वाज, संपादक एवं सभा महामन्त्री

www.thearyasamaj.org

''देव दयानन्द की 1857 के स्वतन्त्रता-संग्राम में भूमिका''

-ले० पं० खुशहाल चन्द्र आर्य C/o गोबन्दि राय आर्य एण्ड सन्ज १८० महात्मा गान्धी रोड़, (ढो तल्ला) कोलकत्ता-700007

यह लेख डॉ० रामफल सिंह दलाल एडवोकेट द्वारा लिखित ''महर्षि दयानन्द सरस्वती एक परिचय ''नामक पुस्तिका में ''भूमिका'' शीर्षक से उद्धृत है। इस पुस्तक में महर्षि का सन् 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम'' जिसको अंग्रेजों ने ''सैनिक विद्रोह'' घोषित किया था, उसमें बहुत अधिक सम्बन्ध दर्शाया गया है, जो साधारण व्यक्ति नहीं जानता, इसलिए इस लेख की उपयोगिता व महत्ता को समझ कर ही यह लेख मैने लिखा है। जो इसी भांति है।

सन् 1855 ई० में स्वामी जी कुम्भ मेला के लिए हरिद्वार आये और चण्डी पर्वत पर ठहरे। वहाँ वे अनेक साधु, सन्तों और महात्माओं के सम्पर्क में आये। इसी स्थान पर स्वामी रूद्रानन्द के माध्यम से क्रान्तिकारी पेशवा, नाना साहब, बाला साहब, अजीमुल्ला खाँ, तात्या टौपे और कुँवर सिंह, स्वामी जी से मिले। स्वामी जी ने अपने विचार उनके सामने रखते हुए कहा-''भारत असभ्य देश नहीं है। अंग्रेज भारतीयों से अधिक सुसभ्य भी नहीं है। ऐसे देश को पद-दलित करना महा पाप है। इसको सहन करना और भी महापाप है। स्वामी जी ने गुलामी के कारणों पर प्रकाश डाला है। महाभारत के काल से भाई-भाई का आपस में लड़ना ही भारत के सर्वनाश का मुख्य कारण है। मुगल शासन के बाद भी मराठों और सिक्खो की शक्तियों के एक न हो पाने से भारत अंग्रेजों के हाथों में चला गया।'' स्वामी जी की घोषणा थी कि ''स्वतन्त्रता का युद्ध कभी विफल नहीं होता।''

कुम्भ मेले में स्वामी जी सन्तों और मठाधीशों से मिले। चारों शंकर पीठों के उत्तराधिकारियों ने स्वाधीनता से कन्नी काट ली। वैष्णव सम्प्रदाय भी देश, समाज की अपेक्षा भजन-कीर्त्तन को अधिक श्रेष्ठ मानते थे। अन्य पंथों के साधु स्वामी जी को ही राष्ट्रीय उद्देश्य से भटकाने लगे। इस मेले में काशी के गौड़ीय मठ के स्वामी विशुद्धानन्द जी भी आये थे। स्वामी जी ने पुरूष सूक्त के मन्त्र ''ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत'' का अर्थ सुना कि ब्राह्मण परमात्मा के मुख से उत्पन्न हुआ है, तो वे बड़े दु:खी हुए और उसका सही अर्थ बताया कि ब्राह्मण समाज का मुख है। उन्होंने इस मेले में मत मतान्तरों का निर्भीकता से खण्डन किया। विरोधियों ने ज्यों-ज्यों स्वामी जी के बारे में दुष्प्रचार किया उससे उनकी प्रसिद्धि बढ़ गई।

कुछ समय उपरान्त झांसी की रानी लक्ष्मीबाई अपनी सहचरी गंगा बाई और तीन अन्य कर्मचारियों के साथ स्वामी जी से मिली। उन्होंने स्वामी जी से हँसते हुए युद्ध में मरने का आशीर्वाद माँगा। स्वामी जी को लगा कि निराश परिस्थितियों में भी स्वाधीनता की चिंगारी शेष है। कहा-''स्वदेश और स्वधर्म की रक्षा के लिए जो अपना नश्वर शरीर दे देते हैं, वे कभी नहीं मरते।'' हम भगवान से आप के लिए शुभ और कल्याण की प्रार्थना करते है।'' लक्ष्मीबाई ने स्वामी जी के इन्कार करने के बाद भी 1001 रूपये दक्षिणा स्वरूप भेंट में दिये। इसी तरह उत्तरी बंगाल से नाटौर की रानी भवानी का वंशज गोविन्दराय भी 1001 रूपये भेंट में देकर गया था।

नाना साहब दूसरी बार स्वामी जी से मिलें और अपनी निर्दिष्ट योजना स्वामी जी को बताई। यथा सम्भव सूचित करने का वचन देकर आशीर्वाद लिया। स्वामी जी ने आशीर्वाद देकर कुछ दक्षिणा राशि जो प्राप्त हुई थी रूपये 2635/ = नाना साहब को स्वदेश रक्षा के लिए दिये। साथ ही चेतावनी दी कि ''जन-साधारण का नेतृत्व और आग से खेलना, दोनों ही खतरनाक हैं। साधारण सी भूल से भी सर्वनाश हो सकता है। अत: आप को सदा सबसे सावधान रहना आवश्यक है।'' स्वामी जी ने विभिन्न सम्प्रदायों के साधुओं को स्वधर्म रक्षा के लिए तैयार रहने और जन-साधारण में नया उत्साह फूँकने का उपदेश दिया। स्वधर्म को पिता और स्वदेश को माता की संज्ञा देकर इनकी रक्षा करना अनिवार्य बताया। ढ़ाई सौ साधुओं की एक सूची तैयार हुई जो स्वामी जी के आदेश पर देश सेवा के लिए तैयार थे। वे स्वामी जी के आदेश पर सैन्यावास (छावनियों) में कमल का फूल बाँट कर सैनिकों को स्वदेश और स्वधर्म की रक्षा के लिए प्रेरित करते हुए चारों दिशाओं में फैले। प्रथम स्वातन्त्रय समर से दो वर्ष पूर्व ही स्वामी जी ने अपनी ओजस्वी वाणी से हताश साधुओं में वीर-भाव का संचार किया। परन्तु उन्हें अधिकतर धर्म गुरूओं से निराशा ही मिली।

अप्रैल 1855 से नवम्बर 1860 तक का स्वामी जी के कार्य क्षेत्र का चुपभाग है जो उनके जीवन प्रसंगों में नहीं आता। नि:सन्देह युगपुरूष दयानन्द सरस्वती क्या इस आन्दोलन में तटस्थ रहने वाले थे? वे अवश्य ही इस महान् कार्य में किसी महान् लक्ष्य की प्राप्ति में संलिप्त अवश्य थे। इस कार्यकाल के बारे में जब उनसे पूछा गया तो उनका उत्तर था कि इस रहस्य को उजागर करने पर भारत कभी भी स्वतन्त्र नहीं हो पायेगा।

महर्षि दयानन्द का जीवन प्रेरक-प्रसंगों से भरा पड़ा है। श्री डॉ० रामफल दलाल के इस संकलन में उत्तम-प्रसंगों, कार्य क्षेत्र एवं व्याख्यानों की एक झलक दिखाने का उत्तम प्रयास है। प्रस्तुत संकलन स्वामी जी की जीवनी न होकर उनकी प्रेरणादायक घटनाओं को अपने अन्दर समेंटे हुए है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि पाठक वृन्द इसे पढ़कर अवश्य लाभ उठा पायेंगे।

गायत्री महायज्ञ की पूर्णाहुति 12 फरवरी को

स्त्री आर्य समाज मॉडल टाऊन जालन्धर द्वारा संचालित माघ मास के गायत्री महायज्ञ की पूर्णाहुति दिनांक 12 फरवरी 2017 दिन रविवार को होगी। निमन्त्रण पत्र में गलती से 12 फरवरी की जगह 13 फरवरी छप गया था परन्तु फाल्गुन मास की संक्रान्ति 12 फरवरी को होने के कारण पूर्णाहुति की तारीख बदलकर 12 फरवरी कर दी गई है। इस अवसर पर मकर संक्रान्ति से प्रारम्भ हुए लगातार एक महीना चलने वाले गायत्री महायज्ञ की पूर्णाहुति होगी। इस अवसर पर विद्वानों के भजन एवं प्रवचन होंगे। लगातार चल रहे इस यज्ञ में बाहर से विद्वानों को आमन्त्रित किया जाता है। सभी आर्य बन्धुओं ने विनम्र निवेदन है कि 13 फरवरी की जगह 12 फरवरी का दिन नोट कर लें और अपने परिवार एवं इष्टमित्रों सहित इस कार्यक्रम में पधार कर धर्म लाभ उठाएं। विशेष पूर्णाहुति समारोह दिनांक 12फरवरी 2017 रविवार को होगा। यज्ञ प्रात: 11:00 से 12:00 बजे तक होगा। यज्ञ के ब्रह्मा पं. सत्यप्रकाश जी शास्त्री होंगे। 12:00 से 2:00 बजे तक भजन एवं प्रवचन होंगे। प्रीतिभोज दोपहर 2:00 बजे होगा। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता श्रीमती गुलशन शर्मा धर्मपत्नी श्री सुदर्शन शर्मा प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब करेंगी एवं संयोजिका श्रीमती ज्योति शर्मा व श्रीमती नीरू शर्मा होंगी। मुख्यातिथि श्रीमती निधि कपूर जी होंगी। मुख्य वक्ता के रूप में महात्मा चैतन्यमुनि जी तथा वक्ता के रूप में स्वामी मधुरानन्दा जी व श्रीमती रेखा कालिया भारद्वाज जी आमन्त्रित हैं। इस अवसर पर भजन श्रीमती रश्मि घई जी व माता सत्याप्रिया यति जी के होंगे। इस कार्यक्रम में श्री सुदर्शन शर्मा जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, श्री प्रदीप आनन्द जी, श्री विनोद चुघ, श्री चन्द्रमोहन, श्री ध्रुव मित्तल जी को सम्मानित किया जाएगा। कार्यक्रम के अन्त में स्त्री आर्य समाज की यशस्वी प्रधाना श्रीमती सुशीला भगत जी द्वारा सभी आए हुए गणमान्य अतिथियों का धन्यवाद किया जाएगा। इस अवसर पर पुरूष भी सादर आमन्त्रित हैं। स्त्री आर्य समाज मॉडल टाऊन आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृतसंकल्प है व निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। स्त्री आर्य समाज द्वारा गत 57 वर्षों से माघ मास में गायत्री महायज्ञ समारोह बड़ी श्रद्धा से मनाया जाता है।

-रजनी सेठी व प्रोमिला अरोड़ा मन्त्राणी स्त्री आर्य समाज

www.thearyasamaj.org

महर्षि दयानन्द सरस्वती की विविधता एवं विलक्षणता

ले. -डॉ० सुशील वर्मा मास्टर मूलचन्द वर्मा गली फाजिलका (पंजाब) 152123

महर्षि दयानन्द सरस्वती को मात्र समाज सुधारक, कट्टर राष्ट्रवादी, पंथो का कटु आलोचक, वैचारिक क्रान्ति वाली आर्य समाज संस्था का संस्थापक मान लेना ही काफी नहीं। उनका मूल्यांकन इस तथ्य से भी अधूरा है कि उन्होंने नारी शिक्षा, अछूतोद्धार, अज्ञानता, अन्धविश्वास एवं पाखण्डों पर कड़ा प्रहार किया, जाति प्रथा उन्मूलन, जाति जन्म से नहीं अपितु कर्म से स्वीकार्य हो, ऐसा मानना। यह सत्य है कि आज हम उनसे प्रेरित होकर प्रचलित सामाजिक कुरीतियों, धार्मिक पाखण्डों एवं अन्धविश्वासों से जूझ रहे हैं। वह युग पुरुष मानवतावादी, वैश्व संस्कृति के उद्गाता, विश्वशान्ति का, महानायक, साम्प्रदायिक सद्भावना का उन्नायक, अन्याय अज्ञानता एवं शोषण के विरुद्ध संघर्षरत कालजयी योद्धा रहे। इन सब से बढ़कर उन्होंने विद्वत समाज को वेदभाष्य की कुंजी प्रदान की, जिसके द्वारा पश्चिमी वेदज्ञों द्वारा वेदों पर हो रहे अनर्गल एवं कुप्रचार के प्रहारों को रोका गया। परिणाम स्वरूप वेदों के उदात्त, विशाल, उत्कृष्ट एवं गंभीर स्वरूप को स्थापित किया गया। वहीं पाश्चात्य विद्वान वेदों में इतिहास तलाशने में जुटे रहे। कभी तुलनात्मक भाषा विज्ञान, कभी तुलनात्मक वेद गाथा तो कभी डार्विन के विकासवाद के सिद्धांत को प्रतिपादित करने हेतु वेदार्थ का सहारा लेते रहे। धन्य है वह वेदज्ञ सन्यासी ऋषि दयानन्द जिसने व्याकरण पर आधारित, निरुक्त में व्युत्पत्ति प्रधान प्रणाली एवं दर्शन को प्राथमिकता देकर वेदार्थ किया। उनका यह उद्घोष ''वेदों की ओर लौट चलो'' भारतीय संस्कृति एवं आर्ष विचारधारा की विजय गाथा बनी। महर्षि दयानन्द के वेद विषयक विचार सर्वाधिक क्रान्तिकारी थे। उनकी मान्यता थी कि वेदों में मनुष्य की सर्वांगीण इहलौकिक एवं पारलौकिक उन्नति के उपाय बताए गए है। यही मानव का सर्वविध उत्थान का मार्ग है। एक ओर तो दयानन्द का यह उदात्त दृष्टिकोण तथा दूसरी ओर सायण आदि मध्यकालीन भाष्यकारों ने कर्म काण्ड परक अर्थ कर वेदार्थ को निम्नस्तर पर लाकर खड़ा कर दिया। सायण, उव्वट, महीधर आदि भाष्यकार वेद मन्त्रों में निहित गूढ़ दार्शनिक आध्यात्मिक एवं मनौ-वैज्ञानिक अर्थों को समझ ही न पाए।

स्वामी जी की विलक्षणता है कि वेदों के प्रसंग आने पर वह यज्ञ अथवा कर्म की ही बात नहीं करते। अपितु यज्ञ एवं कर्म को उन्होंने सदा ही व्यापक अर्थ में लिया। व्यष्टि एवं समष्टि के हित में किए जाने वाले सभी परोपकार पूर्ण कृत्य यज्ञ है। यज्ञ होम, अग्निहोत्र का ही पर्याय नहीं अपितु हमारे व्यक्तिगत एवं सामाजिक अभ्युत्थान हेतु किए जाने वाले लोकहित कर्मों की समष्टि है। उनका यजुर्वेद भाष्य संकेत करता है कि समष्टि भाव से किए जाने वाले कर्म यज्ञमय हो जाते है। इसलिए सम्पूर्ण सृष्टि भी यज्ञमयी है, राजा का सुराज्य भी यज्ञ है, शिल्पविद्या भी यज्ञ है। उन्होंने तो गृहस्थ जीवन को भी यज्ञ कहा है। ईश्वर, विद्वान, और ईश्वरराजा की पालना भी यज्ञ है। इतना ही नहीं दुष्टों का नाश भी यज्ञ है मन्त्र विद्या भी यज्ञ है। यही सार है शतपथ ब्राह्मण के वाक्य ''यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म'' का।

सृष्टि के प्रारम्भ में परमात्मा द्वारा ऋषियों के माध्यम से हमें वेद रूपी ज्ञान प्रदत्त किया गया। उसी ईश्वरीय ज्ञान वेद के साथ ही यज्ञ का प्रादुर्भाव सृष्टि के उद्भव स्थिति और विकास के अनुरूप हुआ। कालान्तर में त्रेतायुग के आते-आते वेदार्थ प्रक्रिया में दो नए वादों ने जन्म लिया एक दैवताद और दूसरा याज्ञिकवाद। जैसे-जैसे यज्ञों की प्रधानता बढ़ी गई वेद का आधिदैविक और आध्यात्मिक स्वरूप गौण होता गया। परिणामत: याज्ञिक वेदार्थ की प्रमुखता बढ़ती गई। ''यथार्थ वेदा प्रवृता:'' का वाद प्रबल होता गया। प्रत्येक कामना की सिद्धि के लिए यज्ञों की रचना हुई और समस्त यज्ञों की विविध क्रियाओं के अनुरूप वेद मन्त्र उपलब्ध न होने पर भी मन्त्रार्थ की उपेक्षा कर याज्ञिक क्रियाओं के साथ उनका सम्बन्ध जोड़ना एवं मन्त्रार्थ के विपरीत विनियोगों का प्रारम्भ हुआ। परिणाम स्वरूप अपने-अपने मतों एवं सम्प्रदायों के अनुसार सन्ध्या एवं हवनों की विधियां प्रारम्भ हुई यज्ञों में बलि दी जाने लगी और यह सब कुछ वेदों के नाम पर। जिसके फलस्वरूप वेदों के प्रति अनास्था एवं घृणा ने जन्म लिया। नास्तिक दर्शन कहे जाने वाले जैन एवं बौध धर्मो का प्रादुर्भाव हुआ। वेदों को ''गडरियों के गीत'' कहे जाने लगा। ऐसे समय में देव दयानन्द ने वेदार्थ को नया आयाम दिया। आर्ष एवं ऋषि परम्परागत निरुक्त पद्धति को स्थापित कर वेदार्थ को वास्तविक एवं उत्कृष्ट रूप में प्रतिपादित कर वेदों का सम्मान बढ़ाया।

जहां पर स्वामी जी ने वेद भाष्य को आधिदैवत एवं आध्यात्मिक स्वरूप में प्रकट किया वहीं यज्ञ को नए रूप में परिभाषित किया। सन्ध्या हवन की नई पद्धति दी। इनमें आर्ष ग्रन्थों, गृह सूत्रों एवं ऋषि परम्परा को सम्मान दिया गया।

तुलनात्मक अध्ययन के लिए यदि हम पंच महायज्ञों में से प्रथम ब्रह्मयज्ञ ''सन्ध्या'' की चर्चा करें तो पौराणिक परम्परा का विवरण हमें आचार्य विश्वश्रवा की पुस्तक ''सन्ध्यापद्धतिमीमांसा'' में प्राप्य है। उनके अनुसार पौराणिक सन्ध्या पद्धति में आचमनों की भरमार है और आचमन के मन्त्रों का आचमन से कोई सम्बन्ध नहीं। गायत्री में परमात्मा को भर्ग शुद्धस्वरूप के बजाए सूर्य को देखकर खड़े होकर घूमना और पुण्डरीकाक्ष कमल के सी आंखों वाले का सोचना कहां तक उचित है। उन्होंने एक ओर तो गायत्री मंत्र को स्वरूप धारिणी स्त्री मान लिया है वहीं दूसरी ओर गायत्री मंत्र को सूर्य के लिए समझ लिया है। उनका एक पांव पर खड़ा होकर नृत्य सा करना विचित्र गायत्री अनुष्ठान है।

इसके विपरीत स्वामी जी द्वारा कृत सन्ध्या पद्धति में स्तुति प्रार्थना उपासना का क्रम है क्योंकि स्तुति का फल ज्ञान है, प्रार्थना का फल अहंकार उन्मूलन और जब ये दोनों सिद्ध हो जायें तब परमात्मा के गुणों के प्रकाश में अपने गुण कर्म स्वभाव को बनाने से उपासना सिद्ध होती है। उस परमपिता परमात्मा का सान्निध्य प्राप्त होता है।

उनकी पद्धति में ''शन्नो देवी'' मन्त्र से शम् की यात्रा प्रारम्भ होती है और उपसंहार भी उसी शब्द शंम (शम्भव, शंकर एवं शिव) से हुआ।

स्वामी जी द्वारा प्रतिपादित पद्धति में पारम्परिक ग्रन्थों की मान्यता को प्रत्यक्ष रख आचमन का सर्व प्रथम विधान है। शतपथ ब्राह्मण का प्रथम मन्त्र यही आदेश देता है कि आचमन पवित्रता शुचिता एवं सौम्यता का प्रतीक है। इसी भावना से प्रेरित हो उन्होंने ''शन्नो देवी मन्त्र'' का विनियोग किया। उनसे पहले किसी ने भी इस मन्त्र का विनियोग आचमन के लिए नहीं प्रयोग किया। सभी ने ''आप:'' शब्द का अर्थ केवल मात्र जल ही लिया परन्तु स्वामी जी ने जल के अतिरिक्त इसे ईश्वर परक अर्थ देकर नया विनियोग किया। मन्त्र को एक उत्कृष्ट एवं ईश्वर परक अर्थ के सन्ध्या की पवित्रता एवं आत्मोसर्ग का साधन प्रतिष्ठित किया। तत्तपश्चात् इन्द्रियों और मन की चंचलता दूर कर एकाग्रता तथा स्वस्थ आत्मा हेतु प्राणायाम का विधान किया। यही योग क्रिया का उद्देश्य है। अशुद्धि का नाश, ज्ञान का प्रकाश और मुक्ति पर्यन्त यह ज्ञान वृद्धि।

योगाङ्गनुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञान-दीप्ति विवेकख्याते (योग साधनापाद सूत्र 18)

इसके बाद अघमर्षण मन्त्रों का विनियोग नासदीय सूत्र (ऋग् 10.1.90) अर्थात् मन की पाप

(शेष पृष्ठ 7 पर)

www.thearyasamaj.org

राजा और प्रजा का आपसी सम्बन्ध कैसा हो

-ले० महात्मा चैतन्यमुनि महादेव, तहसील सुन्दरनगर, मण्डी (हि०प्र०)

राजा और प्रजा का आपसी व्यवहार पिता-पुत्र जैसा होना अपेक्षित है ताकि चतुर्दिक उन्नति प्राप्त हो सके। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज अपने ग्रन्थ सत्यार्थ-प्रकाश में यहां तक लिखते हैं कि राजा यदि अपनी प्रजा से कर भी ले 'तो भी इस प्रकार से लेवे कि जिससे किसान आदि खाने-पीने और धन से रहित होकर दु:ख न पावें।' प्रजा और राजा के आपसी सम्बन्ध के बारे में लिखते हैं-'प्रजा को अपने सन्तान के समान सुख देवे, और प्रजा अपने पिता के सदृश राजा और राजपुरूषों को जाने। यह बात ठीक है कि राजाओं के राजा किसान आदि परिश्रम करने वाले हैं, और राजा उनका रक्षक है। जो प्रजा न हो तो राजा किसका और राजा न हो तो प्रजा किसकी कहावे ? दोनों अपने-अपने काम में स्वतन्त्र, और मिले हुए प्रीतियुक्त काम में परतन्त्र रहें। प्रजा की साधारण सम्मति के विरुद्ध राजा वा राजपुरुष न हों। राजा की आज्ञा के विरुद्ध राजपुरूष व प्रजा न चले। यह राजा का राजकीय निज काम, अर्थात् जिसको 'पोलिटिकल' कहते हैं, संक्षेप से कह दिया। अब जो विशेष देखना चाहें, वह चारों वेद, मनुस्मृति, शुक्रनीति, महाभारतादि में देखकर निश्चय करे।' महर्षि जी की इन पंक्तियों में ही हमें साफ पता चल जाता है कि वास्तव में राजा और प्रजा का आपसी व्यवहार पिता-पुत्र के समान होना अपेक्षित है। जो राजा इस प्रकार से प्रजा की सम्मति के अनुसार नहीं चलेगा उसके बारे में महाभारत के शान्ति पर्व में लिखा है-

प्रभु स्वातन्त्रयमापन्नो ह्यनर्थाच्चैव कल्पते।

भिन्न राष्ट्रा भवेत्सद्यो भिन्न प्रकृतिरेव च।।

अर्थात् राजा अपने मत पर चले तो राष्ट्र में बड़े भारी अनर्थ का कारण होगा तथा राज्याधिकारी मण्डल और सारा राष्ट्र उनके विरुद्ध हो जाएगा। अग्नि पुराण में कहा गया है-

राष्ट्रपीडाकरो राजा करके वसति चिरम्।

अरक्षिता: प्रजा यस्य नरकं तस्य मन्दिरम्।

अर्थात् राष्ट्र को पीड़ित करने वाला राजा चिरकाल के लिए नरक में सड़ता है तथा जो पीड़ा नहीं देता है परन्तु प्रजा की रक्षा भी नहीं करता है ऐसे राजा के लिए भी नरक में मन्दिर बना रहता है। शुक्राचार्य जी कहते हैं-**अन्यथा स्वप्रजातापो नृपं दहति सान्वयम्।** (2-25) अर्थात् प्रजा से जो सन्ताप की अग्नि उठती है वह राजा तथा उसके सारे वंश को दग्ध करके ही शान्त होती है। इसीलिए उनका कथन है-

न कर्षयेत् प्रजां कार्यमिष-तश्चनृप: सदा।

अपि स्थाणुवदासीत शुष्य-न्परिगत: क्षुध।। (2-228,229)

अर्थात् चाहे राजा भूख के मारे सूखकर काठ हो जाए पर अपने लिए प्रजा को कभी न सताए। वेद में इस प्रकार के बहुत से मन्त्र हैं जिनमें राजा को प्रजा के प्रति विनम्र और दयालु रहने की बात कही गई है। राजा यदि अपनी प्रजा के साथ इस प्रकार का व्यवहार करेगा। तभी प्रजा भी उसे सब प्रकार का सहयोग देगी अन्यथा प्रजा बगावत करके उसके राज्य को समाप्त कर सकती है। एक आदर्श राज्य उसे ही कहा जा सकता है जहां राजा और प्रजा में पूर्ण सामंजस्य हो तथा ऐसे राज्य में ही जनता की चतुर्दिक उन्नति संभव है।

अपने राज कर्मचारियों के वेतन आदि तथा जनता की सेवा के लिए राजा आर्थिक व्यवस्था हेतु अपनी जनता से कर लिया करते थे। आज भी किसी न किसी रूप में यह व्यवस्था लागू है। कर लेना उत्पीड़न नहीं था बल्कि महर्षि जी ने साफ शब्दों में निर्देश दिए हैं कि किससे कितना कर लेना है तथा किसको पूर्णतया कर मुक्त करना है इस सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द जी महाराज मनु को उद्धृत करते हुए कहते हैं-

यथा फलेन युज्येत राजा..... सततं करान्।।

यथाऽल्पदन्याऽऽद्यं..... राष्ट्राद्राज्ञाब्दिक: कर:।।

नोच्छिन्द्यात्मनो..... तांश्च पीड्येत।।

तीक्ष्णश्चैव..... भवति सममत:।।

(मनु०7-128,129,139,140)

अर्थात् जैसे राजा और कर्मों का कर्त्ता राजपुरूष वा प्रजाजन सुखरूप फल से युक्त होवें, वैसे विचार करके राजा तथा राजसभा राज्य में कर-स्थापन करे। जैसे जोंक, बछड़ा और भमरा थोड़े-थोड़े भोग्य पदार्थ को ग्रहण करते हैं, वैसे राजा प्रजा से थोड़ा-थोड़ा वार्षिक कर लेवे। अतिलोभ से अपने दूसरों के सुख के मूल को उच्छिन्न अर्थात् नष्ट कदापि न करे, क्योंकि जो व्यवहार और सुख के मूल का छेदन करता है, वह अपने को और उनको पीड़ा ही देता है। जो महिपति कार्य को देख के तीक्ष्ण और कोमल भी होवे, वह दुष्टों पर तीक्ष्ण और श्रेष्ठों पर कोमल रहने से राजा अति माननीय होता है। इसी क्रम में वे (मनु०7-130) कर लेने के प्रकार को भी स्पष्ट करते हैं-

पंचाशद् भाग आदेय राज्ञा पशुहिरण्ययो:।

धान्यानामष्टमो भाग: षष्ठो द्वादश एव वा।।

जो व्यापार करने वाले वा शिल्पी को सुवर्ण और चांदी का जितना लाभ हो उसमें से पचासवां भाग, चावलादि अन्नों में छठां, आठवां वा बारहवां भाग लिया करे और जो धन लेवे, तो भी उस प्रकार से लेवे कि जिससे किसान आदि खाने-पीने और धन से रहित होकर दु:ख न पावें।

राज्य एवं अपनी प्रजा की सुरक्षा के लिए महर्षि जी ने सुगठित और बलशाली सेना के गठन का निर्देश दिया है तथा वेदों के आधार पर अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र और युद्ध की विधियों का वर्णन किया है। बिना युद्ध के ही दूसरों से अपने राज्य की सुरक्षा और दूसरे राज्य पर अधिकार आदि की विधियां भी उन्होंने बताई हैं परन्तु यदि युद्ध अनिवार्य हो जाए तो सैन्य शक्ति इतनी अनुशासित और सुदृढ़ होनी चाहिए कि वह शत्रु के छक्के छुड़ा दे। यहां पर केवल संक्षिप्त सा विवरण हम उस सम्बन्ध में देना उचित समझते हैं। सत्यार्थप्रकाश में वे लिखते हैं-

कृत्वा विधानं मूले तु..... कष्टतरो रिपु:।।

(मनु०7-184 से 86)

जब राजा शत्रुओं के साथ युद्ध करने के लिए जावे, तब अपने राज्य का प्रबन्ध, और यात्रा की सब सामग्री यथाविधि करके, सब सेना, यान, वाहन, शस्त्रास्त्रादि पूर्ण लेकर, सर्वत्र दूतों अर्थात् चारों ओर के समाचारों को देने वाले पुरुषों को गुप्त स्थान करके शत्रुओं की ओर युद्ध करने को जावे। उन्होंने तीन प्रकार के मार्गों अर्थात् स्थल, जल और आकाश मार्गों का प्रयोग करने का विधान भी प्रस्तुत किया है और अपने भीतर के शत्रुओं से भी सावधान रहने को कहा है। इसी क्रम में वे आगे लिखते हैं कि (मनु०7-187 से 192, 194 से 196, 203, 204) युद्धविद्या में सभी सैनिक पारंगत होने चाहिए। अनेक प्रकार की व्यूह रचना करके तथा अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का पूरे मनोयोग से प्रयोग करके अपने विजय को सुनिश्चित करें। राजा एवं सेनाध्यक्ष को अपने शत्रु एवं मित्र की पहचान भी होनी चाहिए। सेनापति वा समस्त सैनिक समस्त गुणों से परिपूर्ण होने चाहिए तथा उन्हें यह विवेक होना चाहिए कि किस समय किन शस्त्रों का प्रयोग करना है ताकि जन सामान्य नाहक ही पीड़ित न हों। यही नहीं उन्हें इतना भी विवेक होना अपेक्षित है कि वे पराजित शत्रु के साथ भी यथायोग्य व्यवहार करे। इस सम्बन्ध में राजा, सेनापति तथा सैनिकों आदि के गुणों का वर्णन हमें वेद में (ऋ०1-39-2, 1-71-1, 1-85-8,9-96-1, 1-39-3, 8-45-40, यजु०10-10 से 14, 29-39, अथर्व०11-10-21, 11-10-1 व 2, 11-9-पूरा सूक्त, 5-21-1, 9, 12 अथर्व०3-2-5) अनेक स्थानों पर भी मिलता है।

राज्य की सुरक्षा तथा युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए दूत की अहम भूमिका मानी गई है। महर्षि जी इस सम्बन्ध में लिखते हैं-

स तानानुपरिक्रामेत् सर्वानेव सदा स्वयम्।

तेषां वृत्तं परिणयेत् सम्यग्राष्टेषु तच्चरै:।।

(मनु०7-122)

जो नित्य घूमने वाला सभापति हो, उसके अधीन सब गुप्तचर अर्थात् दूतों को रखे। जो राजपुरुष और भिन्न-भिन्न जाति के रहें, उनसे सब राज और प्रजा-पुरुषों के सब दोष और गुण गुप्तरीति से जाना करे। जिनका अपराध हो

(शेष पृष्ठ 7 पर)

www.thearyasamaj.org

मुक्तक

-ले० महात्मा चैतन्यमुनि

हर कदम पर एक नया हलाहल पी लिया हमनें,
उधड़े ज़ख्मों को नए सिरे से सी लिया हमनें।
दुनियां ने बहुत बाधाएं खड़ी की राहों में-
खुदा का शुक्र, फिर भी सच्च को जी लिया हमनें।

जानते हैं, हमारी ज़िन्दगी का मक़सद क्या है,
खबर हमें यह भी है दुनियां का क़द क्या है।
उनकी हर चालाकी से हम बाखबर थे मगर-
देखना यह था उनकी नीचता की हद क्या है।।

ग़म कुछ और भी लोगों के पी लूँ अभी,
सियासत के टूटे हुए दिल सी लूँ अभी।
पता नहीं फिर सुअवसर मिले न मिले-
कुछ बोझ औरों का उठाकर जी लूँ अभी।।

कांटों के आगोश में गुलाब बन रहना सीखो,
तोड़ कर बन्धन झरनों सा अविरल बहना सीखो।
झूठ के पोखर सब सूख जाऐंगे अपने आप-
तुम बस सच्ची बात सिर उठाकर कहना सीखो।।

पृष्ठ 2 का शेष-महर्षि दयानन्द द्वारा...

वर्तमान सृष्टि की रचना को एक अरब छपानवें करोड़ आठ लाख तिरपप्पन हजार एक सौ सत्तरह वर्ष व्यतीत हो चुके हैं।

सृष्टि का अन्त-प्रलय सृष्टि का अन्त अथवा पूर्णता है। प्रलयावस्था की आयु भी चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष ही है। सृष्टि रचना तथा प्रलय क्रम से आते रहते हैं जैसे दिन आता है। सृष्टि रचना तथा प्रलय क्रम से आते रहते हैं जैसे दिन के पश्चात् रात्रि और रात्रि के पश्चात् दिन आता है। सृष्टि का अन्त विलोम क्रम से होता है। शरीरादि समस्त पदार्थ पृथिवी में लीन हो जाते हैं, पृथिवी जल में, जल अग्नि में, अग्नि वायु में, वायु आकाश में तथा आकाश प्रकृति के परमाणुओं सत्त्व, रजस और तमस में विलीन होकर प्रकृति के परमाणु अपनी साम्यावस्था में आ जाते हैं।

प्रलय में जीवात्माएं गहन मूर्च्छा की स्थिति में रहती हैं। उन्हें समय तथा स्वयं की स्थिति का कुछ भान नहीं रहता। मुक्त जीवात्माएं इकतीस नील दस खरब चालीस अरब वर्ष तक स्वशक्ति से परमपिता परमात्मा के परमानन्द का भोग करती रहती हैं।

धर्मार्थ अपील

आर्य समाज मन्दिर फिरोजपुर शहर पंजाब की ओर से आप समस्त धर्मप्रेमी महानुभावों से अपील है कि हमारी आर्य समाज का भवन बहुत पुराना एवं जर्जरित हो गया है। आर्य समाज मन्दिर फिरोजपुर शहर के भवन को गिरा कर नए ढंग से भवन निर्माण का कार्य शुरू हो चुका है परन्तु आर्थिक संकट के कारण कार्य बीच में रूक गया है। सम्पूर्ण भवन पर व्यय लगभग 45 लाख रूपये का है। जिसमें 15-20 लाख खर्च हो चुके हैं। आर्य समाज के पास पर्याप्त साधन न होने के कारण इस कार्य को पूर्ण रूप देने में असमर्थ हैं। अत: हमारी आपसे प्रार्थना है कि आप इस सात्विक कार्य में ज्यादा से ज्यादा सहयोग देकर पुण्य के भागी बनें। नीचे लिखे अकाउंट न. पर दान राशि भेजकर सहयोग करें।

आर्य समाज मन्दिर फिरोजपुर शहर
A/C OBC Bank-02772191030668
IFC कोड-: ORBC-100277
सम्पर्क सूत्र तथा अपीलकर्त्ता-:
राजीव गुलाटी महामन्त्री मो.-9463039276
इन्द्रजीत भाटिया प्रधान मो. -9417372538

पृष्ठ 5 का शेष-महर्षि दयानन्द सरस्वती की...

भावनाओं को निर्मूल करना मन की स्थिरता के लिए मनसा परिक्रमा मन्त्रों का चयन उस परमात्मा के व्यापकता (विष्णु) की अनुभूति करवाकर परम सत्ता जो कि सभी का अधिष्ठाता है, रक्षक है, बाण रूपी सुरक्षा प्रदान करता है। द्वेष भाव को छोड़ परमात्मा की न्याय व्यवस्था में विश्वसनियता स्थापित करना। उपस्थान मन्त्रों का विनियोग, ताकि मनुष्य को ज्ञान हो सके कि वह परमपिता जगत् के चेतन और स्थावर पदार्थों में व्याप्त है। ''सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च''। उसकी सत्ता का जगह-जगह पर बोध हो रहा है ''केतवं दृशे विश्वाप सूर्यम'' और वही हमारी आत्मा में प्रकाशित हो रहा है।

गायत्री अनुष्ठान करते हुए समर्पित भाव से प्रार्थना कि वह परमपिता परमात्मा हमें धर्म अर्थ काम मोक्ष की सिद्धि शीघ्रता से हमें प्राप्त कराये। धर्म के द्वारा ही अर्थ की प्राप्ति, धर्म आधारित ही कामनाएं फलीभूत हो। यदि सभी धर्म आधारित हो तो फिर मोक्ष का रास्ता सुगम हो जाएगा।

अन्त में समर्पण रूप में उस परम सता के प्रति नतमस्तक हो नमस्कार मन्त्र का विनियोग उनकी विलक्षणता है उनका विवेक है। कहाँ पौराणिक समाज की सन्ध्या और कहाँ स्वामी जी की विद्वता पूर्वक ब्रह्मयज्ञ पद्धति। धन्य है वह ऋषि धन्य है उनके द्वारा मन्त्रों का सार्थक विनियोग। यही वास्तविक रूप है ऐतरेय ब्राह्मण के कथन के अनुरूप यज्ञ की रूप समृद्धि का

''एतदै यज्ञस्य समृद्धं यत रूपसमृद्धं यत्कर्म क्रियामाण-मृगभिवदति''

इसी प्रकार उनके मन्त्र विनियोग की विलक्षणता देवयज्ञ एवं अन्य यज्ञो में भी दृष्टव्य है। धन्य है वह ऋषि धन्य है उनके वेदार्थ एवं यज्ञ पद्धति।

पृष्ठ 6 का शेष-राजा और प्रजा का आपसी...

उनको दण्ड, और जिनका गुण हो उनकी प्रतिष्ठा सदा किया करे। इस गुप्तचर के गुण के बारे में वे लिखते हैं-

दूतं चैव प्रकुर्वीत.....
राज्ञ: प्रशस्यते।।
(मनु०7-63, 64)

जो प्रशंसित कुल में उत्पन्न, चतुर, पवित्र, हाव भाव और चेष्टा से भीतर हृदय और भविष्यत् में होने वाली बात को जानने हारा, सब शास्त्रों में विशारद-चतुर है, उस दूत को भी रखे। वह ऐसा हो कि राजकाम में अत्यन्त उत्साह-प्रीतियुक्त, निष्कपटी, पवित्रात्मा, चतुर, बहुत समय की बात को भी न भूलने वाला, देश और कालानुकूल वर्तमान का कर्ता, सुन्दर रूप युक्त, निर्भय और बड़ा वक्ता हो। वही राजा का दूत होने में प्रशस्त है। शुक्रनीति (2-86) में दूत की परिभाषा करते हुए कहा गया है कि जो हृदयगत भाव तथा चेष्टा को समझने वाला, राजनीति के छ: उपायों के विषय में उचित मन्त्र-विचार का जानने वाला, बोलने में चतुर और निर्भीक होता है, वह दूत कहाता है। दूत के कार्यों के बारे में महर्षि जी लिखते हैं-'दूत उसको कहते हैं कि जो फूट में मेल, और मिले हुए दुष्टों को फोड़-तोड़ देवे। दूत वह कर्म करे जिससे शत्रुओं में फूट पड़े।' (मनु०7-66) महामना चाणक्य जी का दूत के कार्य के सम्बन्ध में कथन है-(प्र०11 अ०15) राजा का सन्देश दूसरे राजा के पास ले जाना और उसका अपने राजा के पास लाना, सन्धिभाव को बनाए रखना, अपने राजा के प्रताप को बढ़ाना, अधिक से अधिक मित्र बनाना, शत्रु पक्ष के लोगों को फोड़ना, शत्रु के मित्रों को उससे विमुख करना, कार्यरत अपने गुप्तचरों अथवा सैनिकों को समय रहते सुरक्षित निकाल लाना, शत्रु के बान्धवों और रत्न आदि का अपहरण, शत्रुदेश में कार्यरत अपने गुप्तचरों के कार्य पर दृष्टि रखना, समय पड़ने पर पराक्रम दिखाना, बन्धक रखे शत्रु-बान्धवों को शर्तों के आधार पर छोड़ना, जरूरत पड़ने पर दोनों राजाओं की परस्पर भेंट कराना आदि दूत के कार्य हैं।' इस प्रकार के राजा, सेनापति, सैनिक और गुप्तचर आदि जिस राज्य में सक्रिय हों वह राजा ही पूर्णरूप से सुरक्षित तथा सब सुखों से परिपूर्ण हो सकता है। जिस राज्य में राजा एवं प्रजा का आपस में ऐसा व्यवहार हो उसे ही हम आदर्श राज्य कह सकते हैं।

www.thearyasamaj.org

वेदवाणी

कुशल दुहने वाला यज्ञरूपी धेनु का दोहन करे

उप ह्वये सुदुघां धेनुमेतां सुहस्तो गोधुक् उत दोहदेनाम्।
श्रेष्ठं सवं सविता साविषन्नो अभीद्धो घर्मस्तदु षु प्रवोचम्॥
-ऋ १।१६४।२३; अथर्व० ७।७३।७

ऋषिः-**दीर्घतमा॥** देवता-**विश्वेदेवाः॥** छन्दः-**निचृत्त्रिष्टुप्॥**

विनय-ग्रीष्म-काल प्रचण्डता से तप रहा है, वर्षा के बिना सब वृक्ष-वनस्पतियाँ भी सूखी जा रही हैं, इसलिए मैं इस मेघरूपी धेनु (माध्यमिक वाणी) को पुकार रहा हूँ। यह आकाश में फिरती हुई खूब उदक दे सकने वाली मेघ-धेनु (माध्यमिक वाणी) आये और अन्तरिक्षनिवासी मध्यमदेव (इन्द्र) एक कुशल दोहने वाले की भाँति इसे दुह लेवे। ओह ? यह सब परमात्मा की इच्छा के बिना कैसे हो सकता है ? भगवान् की प्रेरणा के बिना तो संसार में एक भी चेष्टा नहीं हो सकती, अतः मैं उनकी करुणा का भिक्षुक हूँ। उनकी करुणामय प्रेरणा से यह धेनु हमारे लिए सर्वश्रेष्ठ रस को देवे, वर्षारूपी दूध पिलाकर इस झुलसी हुई भूमि को तृप्त कर दे। अरे ? यह पृथिवीरूपी धर्म तप रहा है, जलाये जा रहा है, इसीलिए मैं तुम्हें पुकार रहा हूँ। परितप्त व्याकुल संसार वर्षा की माँग मचा रहा है।

मैं बहुत तप कर चुका हूँ, बड़े-बड़े क्लेश उठा चुका हूँ, अब ज्ञान-पिपासा ने मुझे बिल्कुल व्याकुल कर दिया है। इसलिए, हे खूब ज्ञानदुग्धामृत दे सकने वाली सरस्वती देवीरूपी धेनो ? तुम आओ, हृदयान्तरिक्ष में रहने वाला देव-जो कुशल होने वाला मनोदेव है-वह तुम्हें दुह देवे। उस सर्वान्तर्यामी प्रभु की ऐसी दया हो कि मेरे लिए यह सरस्वती-धेनु अब तो उस ज्ञान-दुग्ध को दुह देवे जो संसार में सर्वोत्तम रस है। मुझे तप करते हुए बहुत काल हो गया है। गर्मी के बाद वर्षा आया ही करती है, तो अब तो मेरे लिए ज्ञानामृत पान करने का समय आ गया होगा। मैं इसीलिए पुकार रहा हूँ, क्योंकि मुझ में ज्ञान-पिपासा की अग्नि प्रचण्डता से धधक रही है। इस समय ज्ञानामृत न मिला तो मैं जल जाऊँगा ; ज्ञानामृत मिल गया तो मैं इस समय इस सबको हज़म कर सकता हूँ। मेरी ज्ञान-पिपासा का धर्म तुम्हें पुकार रहा है।

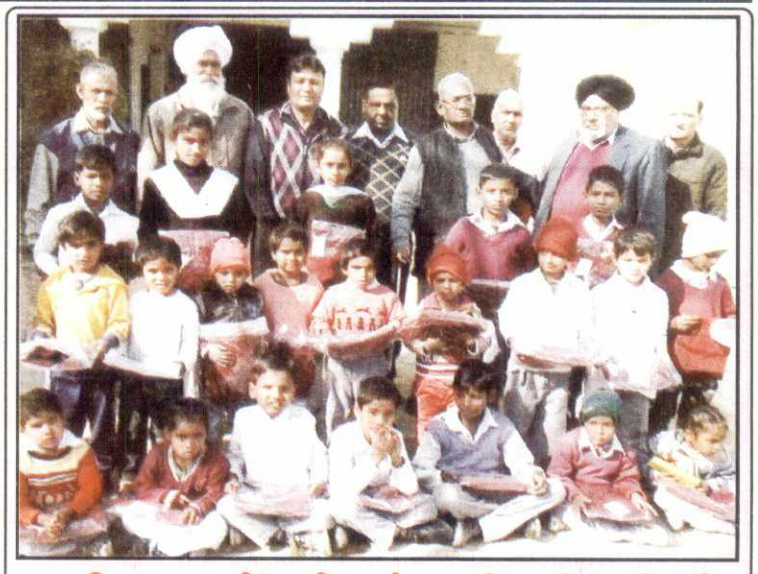

गरीब बच्चों को स्वैटर वितरित किये

आर्य समाज तपा के सदस्य और नार्दन काटन एसोसिएशन के पूर्व डायरैक्टर और एस.एन. आर्य हाई स्कूल तपा के मैनेजर तेजपाल पक्खो ने अपनी माता जी की याद में आर्य समाज मंदिर तपा में हवन यज्ञ करवाया और गरीब बच्चों को गर्म स्वैटर वितरित किये। आर्य समाज के प्रधान डा. राज कुमार शर्मा ने वैदिक मंत्रों और गायत्री मंत्र द्वारा हवन यज्ञ में पवित्र आहूतियां डलवाई और शान्ति पाठ किया। बाद में स्कूल के समूह गरीब विद्यार्थियों में प्रसाद वितरित किया। एन.एन.आर्य हाई स्कूल के जरूरतमंद एवं गरीब विद्यार्थियों को गर्म स्वैटर वितरित किये गये। स्कूल समिति के सचिव सी. मारकंडा ने श्री तेजपाल पक्खो द्वारा गर्म स्वैटर वितरित करने पर उनका धन्यवाद किया गया। इस अवसर पर एडवोकेट जनक गार्गी, मक्खन सिंह भुल्लर, मक्खन लाल बदरा, हरबंस लाल शर्मा, संतोष रानी, मीना रानी, कमलेश रानी और स्कूल के समूह विद्यार्थी उपस्थित थे।

गुरूकुल का आयुर्वेद महान
घर-घर में मिले रोगों से निदान

100 गुरुकुल शताब्दी

गुरुकुल च्यवनप्राश
सभी के लिए स्वादिष्ट,
रुचिकर, पौष्टिक रसायन।

गुरुकुल पायोकिल
पायोरिया की आयुर्वेदिक औषधि
दांतों में खून रोके, मुंह की दुर्गन्ध दूर करे,
मसूड़ों के रोग, ढीले दांत ठीक करे।

गुरुकुल शतशिलाजीत सूर्यतापी
पुष्टीदायक, बलवर्धक
शरीर में नया खून और उत्साह का अनुभव

गुरुकुल ब्राह्मी रसायन
बुद्धिवर्धक, स्फूर्तिदायक, दिमागी कमजोरी दूर करे।

गुरुकुल मधुमेह नाशिनी गुटिका
मधुमेह एवं प्रत्येक प्रकार के प्रमेह में लाभदायक

गुरुकुल मधु
गुणवत्ता एवं ताज़गी के लिए

गुरुकुल चाय
खाँसी, जुकाम, इन्फ्लूएंजा व
थकान में अत्यंत उपयोगी।

अन्य प्रमुख उत्पाद
गुरुकुल द्राक्षारिष्ठ
गुरुकुल रक्तशोधक
गुरुकुल अश्वगंधारिष्ट

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार डाकघर : गुरुकुल कांगड़ी-249404, ज़िला-हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : 0134-416073

शाखा कार्यालय : 63, गली राजा केदार नाथ, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6, फोन : 23261871

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा आर. के. प्रिंटर्स प्रैस, टाण्डा फाटक जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।